विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१ पोस्टल रजि. नं. (M) NS (C) 36

वर्ष १२ • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२६ • आश्विन पूर्णिमा [शक] • दि. १-११-१९८२ • अंक ५

प्रवचन-प्रवाह

दसवां दिन

हमारी साधना का दसवां दिन पूरा हुआ। इन दस दिनों में इस कल्याणकारी साधना के जितने कदम उठाये फिलहाल वही बहुत हैं। इससे इस विधि की एक रूप रेखा सामने आयी।

इसके आगे भी कुछ कदम और हैं। उन पर अभी चर्चा नहीं करेंगे। उनसे संबंध रखने वाले सिद्धान्तों पर भी चर्चा नहीं करेंगे। क्योंकि सिद्धान्त और अभ्यास (Theory and practice) साथ साथ कदम मिला कर चलने चाहियें।

आज की धर्म चर्चा में जो दस दिन में सीखा है, उस पर एक बार फिर दृष्टि डालकर देखेंगे। इस विधि की अपनी एक विशेषता है। इस मार्ग का अपना एक अनूठापन है। इस विशेषता को समझते रहेंगे तो इसकी शुद्धता कायम रखेंगे। विशेषता की बात ही समझ में नहीं आयेगी तो सम्मिश्रण करने लगेंगे। सम्मिश्रण करने लगेंगे तो जो लाभ मिलना चाहिये वह नहीं मिलेगा।

भगवान ने एक जगह कहा कि दो प्रकार के मनुष्य मिलने बड़े दुर्लभ होते हैं – एक तो वह जो बिना बदले में कुछ पाने की जरा सी भी भावना रखते हुए औरों की सेवा करने वाला हो और दूसरा जो कृतज्ञ हो। जिस महापुरुष ने यह खोयी हुई विद्या खोज निकाली यद्यपि उसे इस बात की जरा भी इच्छा नहीं रही कि लोग उसके नाम की पूजा करें, लोग उसका यश गायें, लेकिन हमें जो यह विधि प्राप्त हुई उसके पच्चीस सौ वर्ष के पूर्व के महाकारुणिक उपदेशक भगवान गौतम बुद्ध और उनके बाद की आचार्य परम्परा के जिन लोगों ने इस विधि को सदियों तक सम्भाल कर रखा, उन सबके प्रति श्रद्धा और कृतज्ञता का भाव जगाना एक मानवीय गुण है; धर्म का बहुत बड़ा गुण है।

काम शुरू करते ही तीन रत्नों की शरण ली थी। बुद्ध की शरण याने सिद्धार्थ गौतम जो बुद्ध हो गया, उसके प्रति श्रद्धा के भाव व्यक्त हों, कृतज्ञता के भाव व्यक्त हों, यह स्वाभाविक है लेकिन जहां तक शरण का सवाल है शरण गौतम के प्रति नहीं है। शरण बुद्ध के प्रति है। बुद्ध बोधि का प्रतीक है। बुद्ध कोई भी हो सकता है। उस महा-पुरुष के प्रति हमारे मन में श्रद्धा और कृतज्ञता का भाव पनपे, बढ़े यह एक बात है लेकिन शरण तो बोधि की ही लेनी है। हमारे भीतर जो अपनी बोधि का बीज है, उसी की लेनी है। उसी को हमे विकसित करना है। जीवन भर बोधि की शरण में ही जियें। जो काम करें, बोधि पूर्वक करें, समझदारी से करें। काया का काम, वाणी का काम बोधि के साथ करें। अपनी बोधि जगाते जगाते हम भी मुक्त हो जायें, शुद्ध हो जायें, बुद्ध हो जायें। इस अर्थ में बुद्धकी शरण ग्रहण की।

फिर धर्म की शरण ग्रहण की। धर्म की शरण ग्रहण करना किसी सम्प्रदाय की शरण ग्रहण करना नहीं है। धर्म का सम्प्रदाय से कोई लेन देन नहीं होता। जो व्यक्ति सम्यक् सम्बुद्ध हो जाता है, जिसे सचमुच बोधि प्राप्त हो जाती है वह सचमुच मुक्त हो जाता है। वह कोई सम्प्रदाय खड़ा नहीं करता। सारे जीवन भर वह महापुरुष भी यही चेतावनी देता रहा कि कहीं मनुष्य धर्म के नाम पर धर्म को ही न भुला दे। धर्म के सार को न खो बैठे। जो जो व्यक्ति बोधि प्राप्त कर मुक्त हुआ उसने शुद्ध धर्म ही दिया। किसी संप्रदाय का धर्म नहीं दिया। शुद्ध धर्म तो सबका है, सार्वजनीन है। धर्म तभी शुद्ध होता है जब उसमें साम्प्रदायिकता की सीमा नहीं होती, जाति कीभी नहीं, वर्ग

धम्म वाणी

यो च बुद्धञ्च धम्मञ्च संघञ्च सरणं गतो।
चत्तारि अरियसच्चानि सम्मप्पञ्ञाय पस्सति॥
दुक्खं दुक्खसमुप्पादं दुक्खस्स च अतिक्कमं।
अरियञ्चट्ठङ्गिकं मग्गं दुक्खूपसमगामिनं॥
एतं खो सरणं खेमं एतं सरणमुत्तमं।
एतं सरणमागम्म सब्बदुक्खा पमुच्चति॥

धम्मपद १४/१२, १३, १४.

जो बुद्ध, धर्म और संघ की शरण गया है, जिसने चार आर्यसत्यों- दुःख, दुःखकी उत्पत्ति, दुःख से मुक्ति और मुक्तिगामी आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग को सम्यक् प्रज्ञा से देख लिया है, यही मंगलदायक शरण है। यही उत्तम शरण है। इसी शरण को प्राप्तकर (व्यक्ति) सभी दुःखोंसे मुक्त हो जाता है।

की भी नही। धर्म सबके लिए कल्याणकारी होता है। धर्म की शरण लेने का अर्थ यही है कि मैं धर्म का जीवन जीऊंगा। धर्म के रास्ते चलूंगा।

और फिर संघ की शरण याने उन व्यक्तियों के चले हुए मार्ग का अनुसरण करना जिन्होंने शुद्ध धर्म को धारण कर, संत अवस्था प्राप्त कर ली, आर्य अवस्था प्राप्त कर ली, चाहे वे गृहस्थ हों या संन्यासी, काले हों या गोरे या भूरे, इस देश के हों या उस देश के। किसी जाति या सम्प्रदाय के हों, कोई अन्तर नहीं पड़ता। उनसे प्रेरणा प्राप्त होती है। इस माने में संघ की शरण ग्रहणकी ताकि हम भी सन्त अवस्था को प्राप्त हों।

फिर पांच शील लिये। इनका अर्थ भी ठीक तरह से समझें। किसी ने पांच शील लिये इसलिये बौद्ध नहीं हो गया। परम्पराजन्य शब्दों के प्रति हमारा बड़ा चिपकाव है। अमुक शब्द इस परम्परावालों के लिये, अमुक शब्द उस परम्परावालों के लिये चिपकाव का कारण बन गए। हमारे लिए शब्द ब्रह्म हो गया। "पंचशील कहें" तो बौद्धों को, "अणुव्रत" कहें तो जैनियों को, "यम-नियम" कहें तो हिंदुओंको, टेन कमान्डमेन्टस (TEN COMMANDMENTS) कहें तो इसाईयों को बहुत प्रिय लगे। महज शब्दों के इस्तैमाल से क्या होगा? मूल बात तो यह है कि इन शब्दों से व्यक्त गुण जीवन में उतरे। ये जो पांच शील लिये उनका पालन धर्म के मार्ग पर चलने के लिए नितान्त आवश्यक है। ये आधार शिलाएँ हैं। कोई अपने आपको बौद्ध कहे, जैन कहे, हिन्दू कहे या और कुछ, कोई अन्तर नहीं पड़ता।

शील पालन करना इसलिये आवश्यक है कि हम एक ऐसे कार्य में लगे हैं जो हमारे अन्तर्मन की गहराइयों की खोज का कार्य है, अनुसन्धान का कार्य है। यदि हम पांच शील का पालन नहीं करेंगे तो हमारी समाधि सम्यक् नहीं होगी और यदि समाधि सम्यक नहीं हुई तो प्रज्ञा नहीं जाग पायगी। और प्रज्ञा नहीं जागेगी तो हम विमुक्ति का साक्षात्कार नहीं कर पायेंगे। हमारा अन्तिम लक्ष्य इन्द्रियातीत अवस्था का साक्षात्कार कर लेना है, भीतर की सारी गांठों को खोल देना है, सारे बन्धनों को तोड़ देना है। इस "मैं" के बारे में जो सच्चाई है उसका अनुसन्धान करना है। अपने शरीर स्कन्ध के बारे में, चित स्कन्ध के बारे में जानना है, खोज करना है। खोज करना बहुत आसान नहीं होता। कठिन काम है। किसी सच्चाई को भक्ति भावावेश में मान लेना बहुत सरल है। पर किसी सच्चाई को अनुभूतियों के स्तर पर मान लेना याने जानकर मान लेना कठिन काम है। कुछ अनित्य है तो उसके मुकाबले में नित्य भी अवश्य है। वह नित्य क्या है? केवल मान लेने से हमें क्या मिला? अमृत तो चखा ही नहीं, उस नित्य का स्वाद तो चखा ही नहीं। तो सारी खोज, उस नित्य की खोज, उस परम सत्य की खोज, साक्षात्कार के स्तर पर याने प्रत्यक्ष अनुभूति के स्तर पर करनी होगी।

जब जब आदमी अपना शील भंग करता है, सदाचार भंग करता है, अनाचार दुराचार हिंसा, चोरी व्यभिचार करता है, असत्य भाषण बोलता है तो क्या करता है? उसका मन व्याकुल होता है, व्यग्र होता है। मानसून के मौसम में समुद्र में जैसी तुफानी तरंगे उठती हैं ऐसी ही तुफानी तरंगे उसके मन में उठती हैं। ऐसी हालत में अन्तर्मन में खोज का कार्य कैसे होगा? इसीलिये साधना के इन दस दिनों शील सदाचार का कड़ाई से पालन करते हैं ताकि अन्तर्मन की गहराई तक सत्य की खोज कर सकें। इसलिये शील परम आवश्यक है। इस साधना की बुनियाद है।

फिर समर्पण किया। पूरी तरह आत्म समर्पण। आत्म समर्पण इसलिये नहीं कराया कि गुरू महाराज ने जो कुछ कह दिया अन्ध विश्वास द्वारा आंख बन्द करके उसे मानना ही पड़ेगा। इस विधि में अन्ध विश्वास को कहीं स्थान नहीं। सारी साधना सत्य के आधार पर चलती है। लेकिन साथ साथ यह भी नहीं कि दस दिन तर्क वितर्क ही होता रहे। इस तर्क वितर्क से बचें। एक मुमुक्षु की तरह, एक जिज्ञासु की तरह बात पूछनी बहुत आवश्यक है। उसमें संकोच नहीं करना है। मन में जो शंका उठे उसे दूर कर लेना चाहिये। लेकिन दस दिन तक अच्छी तरह समझकर समर्पण भाव से जैसे बताया जावे, ऐसे काम करें। दस दिन तक इस विधि को पूरा इन्साफ देकर देखें। दस दिन के बाद सब अपने मालिक हैं।

जब काम शुरू किया तो किस तरह काम शुरू किया उसे समझें। विधि को समझें। सबसे पहले सांस को देखने लगे, सांस के साथ कोई शब्द नहीं जुड़ने दिया, कोई रूप नहीं जुड़ने दिया। नाम का अपना महत्व होता है। बार बार एक नाम को दोहराते जायेंगे, तो मन एकाग्र होने ही लगेगा। रूप का अपना महत्व होता है। जिस रूप के प्रति हमारे मन में बहुत श्रद्धा है, बार २ उस रूप की कल्पना मन में करेगें तो मन एकाग्र होने ही लगेगा। लेकिन नाम और रूप दोनों को इसलिये दूर रखा गया कि इस मार्ग में चित को एकाग्र करने का अपना एक कारण है, लक्ष्य है। लक्ष्य यह है कि अपने भीतर जो स्वाभाविक तरंगे हैं उनकी जांच करना है, उनका अनुसन्धान करना है, उनके बारे में जानना है।

यदि हमने कोई शब्द इस्तेमाल करना शुरू कर दिया और बार बार उसी शब्द को दोहराना शुरू कर दिया तो उसका अपना प्रभाव होगा। हर शब्द की अपनी एक विशेषता है। शब्द एक टंकार पैदा करता है, एक तरंग पैदा करता है। जो बीज मंत्र है उसकी अपनी तरंग है। शब्दों द्वारा जो तरंग पैदा करेंगे उसी में एक दम समाहित हो जायेंगे। उन तरंगो को खूब देख पायेंगे। पर इस प्रक्रिया से अपनी नैसर्गिक तरंगो को देखने से वंचित रह जायेंगे। जब क्रोध आता है, जब वासना जागती है, जब ईर्षा जागती है तो भीतर क्या होता है? उसे देखने से वंचित रह जायेंगे।

हमारा लक्ष्य केवल चित्त की एकाग्रता नहीं है, केवल समाधि नहीं है—लक्ष्य है सम्यक् समाधि, जिसका आधार न राग हो, न द्वेष न मोह। इसी लिए काल्पनिक रूप का ध्यान नहीं। जहां कल्पना आयी की मोह का आधार हो ही गया, जहां कृत्रिम बात पैदा कर उसे देखने लगे तो मोह का आधार हो ही गया,। हमें नैसर्गिक सांस का दर्शन करना है, जो है, जैसा भी सांस है, उसे ही देखना है। सांस को देखते देखते सांस के स्पर्श को देखने लगे और आगे बढ़े तो सारे शरीर में होने वाली संवेदनाओं को देखने लगे।

संवेदनाओं को देखने से क्या मिला? वस्तुतः हमें जानना यह है कि हमारे लिए जीवन में कठिनाइयां कैसे पैदा होती हैं? हमें जानना

यह है कि जीवन जगत की इन कठिनाइयों से कैसे निकल सकते हैं। जानना यह है कि हम अपने मन पर कैसे मैल चढ़ाने लगते हैं, कैसे गांठें बान्धने लगते हैं। जानना यह है कि वह मैल कैसे पैदा न करें। गांठें कैसे न बान्धें। बल्कि जो बन्धीं हैं वे कैसे खुलें? उस महापुरूष ने गहराईयों में जाकर यही तो देखा और बार बार यह समझाया कि विषयों में रहने वाला व्यक्ति बड़ा दुःखियारा रहता है। इन्द्रियों के विषय हमे बान्धने वाले होते हैं। एन्द्रिय विषयों के प्रति आसक्त रहने वाला व्यक्ति भला मुक्ति के रास्ते कैसे जायेगा? वह तो और उलझता ही जायगा। लेकिन जहां परम सत्य की ओर जायें, सूक्ष्म सत्य की ओर जायें वहां एक बात समझ में आयेगी कि इन्द्रिय और विषय के सम्पर्क होने पर विषय में डूबने की जो बात होती है उसके पहले एक घटना और घटती है। उन दोनों के बीच की एक कड़ी और है। केवल विषयों से कोई हानि नहीं होती, हानि होती है विकारों से। विषय हमारा क्या लेते हैं? शब्द अपनी जगह है, रूप अपनी जगह है, गन्ध अपनी जगह है, स्पर्श अपनी जगह है, रस अपनी जगह है, चिन्तन अपनी जगह है। उनकी वजह से विकार नहीं जगता। विकार जागता है इन्द्रिय और विषय के सम्पर्क से जो संवेदना हुई और जो मूल्यांकन हुआ राग उस पर जागता है, द्वेष उस पर जागता है। यह सचमुच में बड़ी खोज हुई। बड़ा रहस्य खोल लिया उस व्यक्ति ने कि जो संवेदना को जानता है वही जानेगा कि राग कहां पैदा होता है, द्वेष कहां पैदा होता है?

संवेदनाओं के देखने के अभ्यास में एक बात और समझ लेनी है। जब जब इंद्रियों का विषयों से स्पर्श होता है, त्वरित गति से मूल्यांकन होकर संवेदना होने लगती है। और जिस समय स्पर्शजन्य संवेदना होती है उस समय होश नहीं रहे तो हम राग या द्वेष जगाने ही लगते हैं। ऐसा स्वभाव बन गया है। विषय तो कायम रहेंगे ही. इन्द्रियों का विषयों के साथ सम्पर्क भी होगा ही, लेकिन उसकी वजह से जो विकार जागता है उस पर रोक लगानी है। रोक जहा संवेदना जगती है वहां लगानी होगी। हर संवेदना के प्रति राग विहीन रहना है, द्वेष विहीन रहना है। "वेदना पच्चया तण्हा" हर वेदना के साथ जो तृष्णा जागती थी राग की तृष्णा-द्वेष की तृष्णा-अब उसकी जगह "वेदना पच्चया पञ्ञा" हर वेदना के साथ प्रज्ञा ही जागेगी, बोधि ही जागेगी। इससे नयी गांठें नही बन्धेंगीं। पुरानी खुलने लगेंगी। सारी खुलने में समय लगेगा। लेकिन सही मार्ग मिल गया, सही विधि मिल गयी। काम शुरू हो गया।

काम तो खुद ही करना पड़ेगा। गांठें स्वयम् ने बान्धी हैं। अतः स्वयम् को ही खोलनी पड़ेगी। इस खोलने के काम में प्रकृति खूब मदद करेगी। ऋत खूब मदद करेगी। अपने भीतर के अहं भाव को, अहंकार को निकालना पड़ेगा। यही 'अनात्म' है। दार्शनिकों के विवाद वाला आत्म वाद या अनात्म वाद नहीं। उसे एक तरफ रखें। जहां 'मैं' नहीं 'मेरा' नहीं। अहंकार का नामो निशान नहीं, ममकार का नामो निशान नहीं। न हीन भावना है न अहं भावना। मध्यम मार्ग पर चलना है। अपने आप बन्धन खुलने लगेंगे।

दस दिनों की साधना में जो कुछ किया उसे ऐसा क्यों किया यह समझते रहेंगे तो कहीं उलझेंगे नहीं। दार्शनिक मान्यताओं के विवाद में नहीं पड़ना है। लाभ तो विधि के अभ्यास से मिलने वाला है। जहां तक विधिका सवाल है उसे किसी अन्य साधना विधि से मिश्रित नहीं करना है। इस रास्ते चलकर सचमुच लाभ लेना है तो इस विधि को शुद्ध रूप में कायम रखना ही पड़ेगा।

कल्याण मित्र,
स. ना. गो.

(पू. गुरुदेव के प्रवचन का श्री. रामसिंह द्वारा संक्षिप्तिकरण)

सहायक आचार्योंके भावी शिबिर

एन.एच./६ इगतपुरी २९-११ से १०-१२-८२ श्री एन. एच. पारीख
आर.एस./३ हैदराबाद ५-१२ से १६-१२-८२ श्री रामसिंह
आर.एस./४ इगतपुरी २१-१२ से १-१-८३ श्री रामसिंह
एन. एच. / ७ कलकत्ता २१-१२ से १-१-८३ श्री एन. एच. पारीख
एल. एन. / ४ इन्दौर २३-१२ से ३-१-८३ श्री लक्ष्मी नारायण राठी

संपर्क

१) इगतपुरी — व्यवस्थापक, विपश्यना अन्तर्राष्ट्रीय विद्यापीठ, इगतपुरी-४२२४०३ फोन इगतपुरी ७६

२) हैदराबाद — १) श्रीमती ऊषाबेन पी. मेहता, ६१, श्रीनगर कॉलोनी हैदराबाद-५००८७३. फोन : ३०२९१. अथवा
२) श्री. पूरनमल अग्रवाल, द्वारा-होटल राजधानी सिद्दिअम्बर बाजार, हैदराबाद-५०००१२. फोन : ५७५७१

३) कलकत्ता — १) श्री. सुदर्शन ढंढारिया, ४८-डी, मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००००७ फोन : ३४४७९२ अथवा
२) श्री. नागरमल पेडीवाल, पायोनियर प्लास्टिक, ९ इज्रा स्ट्रीट, कसकत्ता-७००००१. फोन : २६४०८०/८१ ग्राम: प्लास्टिप्लाई

४) इन्दौर — १) श्री भगवानदास तोषणीवाल ३ डॉ. रोशनसिंह भंडारी मार्ग इन्दौर (म. प्र.) टेलीफोन ५४४०

अथवा

२) श्री. मोहनलाल केला ५९ साकेत, इन्दौर (म. प्र.) टेलीफोन ५४०९, ६८००

सूचना : नागपुरमें सामूहिक साधना
स्थान-परिवर्तन
नया स्थान : हिन्दी मोरिस-भवन
झांसी रानी चौक, सीताबर्डी, नागपुर
समय : प्रति रविवार, प्रांत : ८-०० से ९-०० बजे

- भावी शिविर -

शि. क्र.	स्थान	दिनांक से तक		शि. क्र.	स्थान	दिनांक से तक	
२२३	जयपुर	१८-११-८२ से २९-११-८२	(हिंदी)	२२४	इगतपुरी	१०-१२-८२ से २१-१२-८२	(हिंदी)
२२५	इगतपुरी	१-१-८३ से १२-१-८३	(अंग्रेजी)	पू. गुरुजीका स्वयं शिविर* –	इगतपुरी	१८-१-८३ से ३०-१-८३	
२२६	हैदराबाद	३-२-८३ से १४-२-८३		● लघुशिविर	हैदराबाद	१४-२-८३ से २१-२-८३	

१) तीस दिनका दीर्घ शिविर* – इगतपुरी ३०-११- से ३१-१२-८२ २) तीस दिनका दीर्घ शिविर* – इगतपुरी १-१-८३ से ३०-१-८३

*इन शिविरोंमें पू. गुरुजी द्वारा स्वीकृत पुराने साधक ही प्रवेश पा सकेंगे।

● (केवल पुराने साधकों के लिए) इसमें पूज्य गुरुजी सतिपट्ठान सुत्त की व्याख्या करेंगे।

इगतपुरी में स्वयं शिविर

११४ ५-११-८२ से १६-११-८२ तक ११५ १६-११-८२ से २७-११-८२ तक

ग्राम : प्रेमकेबल फोन : ४०३५१/४०५४७

मेसर्स दि प्रीमियर केबल कं लिमिटेड

१४/१५ एफ कॅनॉट सर्कल

नई दिल्ली–११०००१

की मंगल कामनाओं सहित

↓

दूहा धरम रा

नमन करूं भगवन्त नै, जो सम्यक सम्बुद्ध।
नमन करूं अरिहन्त नै, जो पावन परिसुद्ध॥
नमन करूं हूं धरम नै, सम्प्रदाय सूं दूर।
जन जन रै कल्याण हित, मंगल सूं भरपूर॥
नमन करूं हूं संघ नै, जो जग धरम जगाय।
जात बरण रै भेद बिन, सन्ता रो समुदाय॥
बोधि जगावै चित्त मँह, दूर करै अग्यान।
बुद्ध रतन कै सरण की, या साची पहचान॥
धरम धारल्यां पाप को, रवै न नाम निसान।
धरम रतन कै सरण की, या साची पहचान॥
देख सन्त की सुद्धता, भरै प्रेरणा प्राण।
संघ रतन कै सरण की, या साची पहचान॥

दोहे धर्म के

करूं वन्दना बुद्ध की, सादर करूं प्रणाम।
बोधि जगे प्रज्ञा जगे, होय चित्त निष्काम॥
करूं वन्दना धरम की, सादर करूं प्रणाम।
पग पग पग चल धरम पथ, पाऊं मंगल धाम॥
करूं वन्दना संघ की, सादर करूं प्रणाम।
जगे प्रेरणा मुक्ति की, मिले सुखद परिणाम॥
तीन रतन की शरण में, धरम शरण ही जान।
तीन रतन की वन्दना, धरम वन्दना जान॥
पूजन, अर्चन, वन्दना, तोही सार्थक होय।
जीवन में जागे धरम, पाप विसर्जित होय॥
बुद्ध, धरम का संघ का, यह सच्चा सम्मान।
जीवन जीऊं धरम का, पाऊं पद निर्वाण॥

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट, बंबई–२३. टेलीफोन : ११३५१०. ● मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपूर, नासिक–४२२ ००७. टेलिफोन : ८८२५१. ● पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रु. ५००/–, चौथाई पृष्ठ रु. २५०/– ● वार्षिक शुल्क रु. ५/–, आजीवन शुल्क रु. ५१/–

"विपश्यना" 11/82

पो. रजि. नं. (M) NS (C) 96

Licence No. NS 18
Licensed to post without pre-payment

प्रेषक :
सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)

To